International Journal of Enhanced Research in Educational Development (IJERED)
ISSN: 2320-8708, Vol. 3 Issue 5, Sept.-Oct, 2015, Impact Factor: 1.554

वैश्वीकरण के युग में भारतीय संस्कृति की पहचान

डॉ. सुशील कुमार शर्मा

प्राध्यापक, इतिहास विभाग राजकीय महाविद्यालय, गुढ़ागौड़जी झुंझुनूं

सारांश

वैश्वीकरण **20**वीं और **21**वीं शताब्दी की सबसे प्रभावशाली सामाजिक-आर्थिक प्रक्रिया रही है, जिसने विश्व के हर राष्ट्र की राजनीति, अर्थव्यवस्था, समाज और संस्कृति को गहराई से प्रभावित किया है। भारतीय संस्कृति, जो अपनी प्राचीनता, विविधता और आध्यात्मिक गहराई के लिए विश्वविख्यात है, इस वैश्वीकरण के दौर में एक ओर नए अवसरों के साथ सामने आई है तो दूसरी ओर उसे सांस्कृतिक एकरूपता और पाश्चात्य प्रभाव जैसी चुनौतियों का भी सामना करना पड़ा है। यह शोध-पत्र भारतीय संस्कृति के मूल तत्वों, उस पर वैश्वीकरण के प्रभावों, सांस्कृतिक पहचान के संकटों और भारतीय समाज द्वारा इन प्रभावों के प्रति अपनाई गई समायोजन एवं प्रतिरोध की प्रक्रियाओं का विश्लेषण करता है। साथ ही यह शोध यह भी रेखांकित करता है कि किस प्रकार भारत ने आधुनिक तकनीक, संचार, और वैश्विक बाजारों के बीच अपनी सांस्कृतिक अस्मिता को संरक्षित रखने का संतुलन साधा है।

परिचय

भारत विश्व की प्राचीनतम सभ्यताओं में से एक है, जिसकी सांस्कृतिक जड़ें हजारों वर्षों पुरानी हैं। भारतीय संस्कृति केवल एक भौगोलिक या भाषाई इकाई नहीं है, बल्कि यह जीवन दर्शन, आध्यात्मिकता, विविधता में एकता और सार्वभौमिक मानवतावाद की प्रतीक है। वैदिक परंपराओं से लेकर आधुनिक काल तक, भारत ने सांस्कृतिक आदान-प्रदान की अनेक लहरों का अनुभव किया है। वैश्वीकरण की वर्तमान लहर, जो विशेषतः 1990 के दशक के बाद आर्थिक उदारीकरण के साथ भारत में प्रवेश करती है, ने सांस्कृतिक परिदृश्य को भी नई दिशाओं में मोड़ा है। यह काल भारतीय संस्कृति के लिए न तो पूर्णतः नकारात्मक रहा है और न ही पूरी तरह सकारात्मक। वैश्वीकरण ने भारत की सांस्कृतिक विरासत को विश्व मंच पर प्रस्तुत करने का अवसर दिया है, लेकिन साथ ही पाश्चात्य उपभोक्तावादी संस्कृति ने पारंपरिक मूल्यों को चुनौती भी दी है।

वैश्वीकरण की अवधारणा और उसका सांस्कृतिक आयाम

वैश्वीकरण एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके माध्यम से आर्थिक, राजनीतिक, तकनीकी और सांस्कृतिक सीमाएँ धीरे-धीरे समाप्त होती जा रही हैं और विश्व एक साझा बाजार तथा संवाद का मंच बनता जा रहा है। तकनीकी विकास, सूचना क्रांति, और अंतरराष्ट्रीय संचार माध्यमों के विस्तार ने वैश्वीकरण को तीव्र गति दी है। यद्यपि इसका आरंभ आर्थिक उद्देश्यों के लिए हुआ था, लेकिन इसका सांस्कृतिक प्रभाव सर्वाधिक व्यापक और गहरा रहा है। वैश्वीकरण के कारण विश्व के विभिन्न देशों की जीवनशैली, उपभोग की प्रवृत्तियाँ, कला, भाषा, और यहाँ तक कि मूल्य-मान्यताएँ भी एक समानता की ओर बढ़ रही हैं। इस प्रवृत्ति को सांस्कृतिक समरूपीकरण कहा जाता है, जिसके कारण स्थानीय संस्कृतियाँ अपनी विशिष्टता खोने लगती हैं।

भारतीय संस्कृति का स्वरूप और इसकी मूल विशेषताएँ

भारतीय संस्कृति की नींव 'सर्वे भवन्तु सुखिनः', 'वसुधैव कुटुम्बकम्' और 'अहिंसा परमोधर्मः' जैसे सार्वभौमिक सिद्धांतों पर आधारित है। यह संस्कृति धर्म, दर्शन, कला, संगीत, साहित्य, लोक परंपरा और नैतिक मूल्यों का एक समग्र संगम है। भारतीय संस्कृति में सहिष्णुता, समावेशिता, परिवारवाद, अध्यात्म और कर्मप्रधानता प्रमुख विशेषताएँ रही हैं। यहाँ संस्कृति को केवल धार्मिकता या परंपरा तक सीमित नहीं माना गया, बल्कि यह जीवन के हर क्षेत्र — शिक्षा, संगीत, नृत्य, भोजन, वस्त्र, भाषा और व्यवहार — में व्याप्त है। भारत की सांस्कृतिक विविधता उसे एक बहुरंगी, बहुभाषिक और बहुधार्मिक समाज के रूप में विश्व में विशिष्ट स्थान प्रदान करती है।

वैश्वीकरण और भारतीय सांस्कृतिक संरचना का अंतःसंबंध

1991 के आर्थिक उदारीकरण के बाद भारत ने विश्व बाजार से अपने संबंधों को खोला। विदेशी निवेश, बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ, उपभोक्ता वस्तुओं की बाढ़ और डिजिटल मीडिया के आगमन ने भारतीय समाज को तीव्रता से प्रभावित किया। इसके साथ ही, पश्चिमी जीवनशैली, वस्त्र, संगीत, और भोजन की आदतें भारतीय समाज में तेजी से लोकप्रिय हुईं। युवा पीढ़ी पर इसका विशेष प्रभाव पड़ा, जिनके लिए उपभोग, फैशन और ब्रांड संस्कृति एक नई पहचान बन गई। इस परिवर्तन ने पारंपरिक भारतीय मूल्य जैसे — संयम, सामूहिकता और आध्यात्मिकता — को कुछ हद तक पीछे धकेला। हालाँकि,

वैश्वीकरण ने भारतीय संस्कृति को नष्ट नहीं किया, बल्कि उसे पुनःपरिभाषित किया। योग, आयुर्वेद, भारतीय संगीत, बॉलीवुड, और भारतीय भोजन जैसी सांस्कृतिक अभिव्यक्तियाँ अब वैश्विक मंच पर सम्मानपूर्वक स्वीकृत हैं। भारत की पारंपरिक कला और त्योहार अब डिजिटल प्लेटफॉर्म पर विश्वव्यापी दर्शकों तक पहुँच रहे हैं। यह स्थिति एक प्रकार का "संस्कृति का पुनर्जागरण" भी दर्शाती है।

सांस्कृतिक पहचान का संकट और चुनौतियाँ

वैश्वीकरण के परिणामस्वरूप भारतीय संस्कृति को कई प्रकार की चुनौतियों का सामना करना पड़ा है। सबसे प्रमुख चुनौती है सांस्कृतिक पहचान का संकट। पाश्चात्य मीडिया, उपभोक्तावादी सोच, और विज्ञापन संस्कृति ने भारतीय युवाओं के मन में 'आधुनिकता' की ऐसी अवधारणा स्थापित की है, जिसमें पश्चिमी जीवनशैली ही प्रगति और सफलता का प्रतीक बन गई है। इस प्रक्रिया में पारंपरिक परिवार प्रणाली, भाषा और लोक कलाओं की उपेक्षा हुई है। भारतीय भाषाओं की जगह अंग्रेज़ी का प्रभुत्व बढ़ा है, और महानगरों में स्थानीय परंपराओं का लोप होता जा रहा है। इसके अतिरिक्त, सांस्कृतिक उत्पादों के व्यवसायीकरण ने संस्कृति को बाज़ार का उपकरण बना दिया है। धार्मिक पर्व, जो कभी सामाजिक एकता और आध्यात्मिक साधना के प्रतीक थे, अब उपभोक्तावादी उत्सव बन गए हैं। मीडिया और विज्ञापन उद्योग ने इन परंपराओं को व्यावसायिक दृष्टिकोण से पुनःगठित किया है। इससे भारतीय समाज में मूल्यों का परिवर्तन और सांस्कृतिक विचलन देखा जा सकता है।

भारतीय संस्कृति का वैश्विक विस्तार: अवसर और पुनर्जागरण

यद्यपि वैश्वीकरण ने सांस्कृतिक चुनौतियाँ प्रस्तुत की हैं, लेकिन इसने भारत के लिए अनेक अवसर भी खोले हैं। भारतीय संस्कृति की अनेक शाखाएँ अब वैश्विक स्तर पर लोकप्रियता प्राप्त कर रही हैं। अंतरराष्ट्रीय योग दिवस (21 जून), भारतीय भोजन की वैश्विक मांग, बॉलीवुड की लोकप्रियता, और भारतीय परिधानों का फैशन उद्योग में स्थान — यह सब भारतीय संस्कृति की वैश्विक पहचान को सुदृढ़ कर रहे हैं। इंटरनेट और सोशल मीडिया ने भारत को एक 'सांस्कृतिक सॉफ्ट पावर' के रूप में उभरने का अवसर दिया है। भारतीय दर्शन और अध्यात्मिकता, जैसे भगवद्गीता, उपनिषद और ध्यान योग की अवधारणाएँ, पश्चिमी समाज में आत्मिक शांति और मानसिक स्वास्थ्य के प्रतीक के रूप में स्थापित हो रही हैं। इस प्रकार वैश्वीकरण ने भारत को न केवल प्रभावित किया है बल्कि भारत ने भी वैश्विक संस्कृति में अपना योगदान बढ़ाया है।

भारतीय समाज का समायोजन और प्रतिरोध

भारतीय समाज ने वैश्वीकरण के प्रभावों के प्रति केवल निष्क्रिय स्वीकृति नहीं दी, बल्कि उसने अपनी परंपराओं को आधुनिक संदर्भों में ढालने का प्रयास किया। उदाहरण के लिए, पारंपरिक भारतीय संगीत में फ्यूजन का प्रयोग, पारंपरिक वस्त्रों के आधुनिक रूप, और धार्मिक अनुष्ठानों में तकनीकी नवाचार — यह सब इस समायोजन के उदाहरण हैं। इसके साथ ही, अनेक सामाजिक एवं सांस्कृतिक संगठनों ने भारतीय भाषाओं, लोककला, और पारंपरिक ज्ञान प्रणालियों के संरक्षण के लिए प्रयास किए हैं। "मेक इन इंडिया" और "वोकल फॉर लोकल" जैसे अभियानों ने न केवल आर्थिक आत्मनिर्भरता बल्कि सांस्कृतिक आत्म-सम्मान को भी बढ़ावा दिया है। यह दर्शाता है कि भारतीय समाज में सांस्कृतिक आत्मचेतना अब भी सशक्त है और वह वैश्वीकरण की दिशा में भी अपनी जड़ों से जुड़ा रहना चाहता है।

भारतीय संस्कृति की निरंतरता और भविष्य की दिशा

वैश्वीकरण के युग में भारतीय संस्कृति की पहचान की स्थिरता इस बात पर निर्भर करती है कि वह आधुनिकता और परंपरा के बीच किस प्रकार का संतुलन बनाती है। संस्कृति कोई स्थिर वस्तु नहीं, बल्कि एक निरंतर विकसित होने वाली प्रक्रिया है। भारत के पास यह शक्ति है कि वह विश्व संस्कृति में अपनी मूल विचारधारा — समरसता, मानवता, और सहअस्तित्व — को केंद्र में रखकर आधुनिकता को अपनाए। शिक्षा प्रणाली में भारतीय मूल्यों का समावेश, भारतीय भाषाओं का संवर्धन, और डिजिटल माध्यमों पर स्थानीय संस्कृति का प्रचार — ये सभी भारतीय संस्कृति के भविष्य के लिए आवश्यक कदम हैं। यदि भारत इस संतुलन को बनाए रखता है, तो वैश्वीकरण उसकी पहचान को मिटाने के बजाय उसे और अधिक सशक्त बनाने का माध्यम सिद्ध होगा।

निष्कर्ष

वैश्वीकरण का भारतीय संस्कृति पर प्रभाव गहन और बहुआयामी रहा है। जहाँ इसने सांस्कृतिक उपनिवेशवाद, पाश्चात्य प्रभाव और उपभोक्तावाद जैसी चुनौतियाँ दीं, वहीं इसने भारतीय संस्कृति को वैश्विक मंच पर पुनःस्थापित करने के अवसर भी प्रदान किए। भारतीय समाज की सबसे बड़ी शक्ति उसकी समावेशी प्रवृत्ति और सांस्कृतिक अनुकूलन क्षमता रही है। भारत ने आधुनिकता को आत्मसात करते हुए भी अपनी परंपराओं को त्यागा नहीं, बल्कि उन्हें नए रूपों में प्रस्तुत किया। इस प्रकार कहा जा सकता है कि वैश्वीकरण के युग में भी भारतीय संस्कृति अपनी पहचान को बनाए रखने में सफल रही है — क्योंकि इसकी जड़ें केवल परंपरा में नहीं, बल्कि "विविधता में एकता" के उस दर्शन में निहित हैं जो भारतीयता का सार है।

संदर्भ सूची

[1]. अप्पादुरै, अर्जुन (2001). Modernity at Large: Cultural Dimensions of Globalization. University of Minnesota Press.
[2]. गिडेन्स, एंथनी (2002). *मॉडर्निटी एंड सेल्फ-आइडेंटिटी*. लंदन: पॉलिटी प्रेस।
[3]. नंदा, मीरा (2010). The God Market: How Globalization is Making India More Hindu. Random House India.
[4]. सेन, अमर्त्य (2005). The Argumentative Indian: Writings on Indian History, Culture and Identity. Penguin Books.
[5]. UNESCO (2013). Culture: A Driver and an Enabler of Sustainable Development. United Nations.
[6]. त्रिपाठी, रामस्वरूप (2014). *वैश्वीकरण और भारतीय संस्कृति*. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन।
[7]. सेन, अमर्त्य (2005). *द आर्ग्युमेंटेटिव इंडियन*. लंदन: पेंग्विन बुक्स।
[8]. हॉल, स्टुअर्ट (1997). *कल्चरल रिप्रेज़ेंटेशन्स एंड आइडेंटिटी*. लंदन: सेज पब्लिकेशन्स।